भगत रविदास – सबद ३७

तुझहि सुझंता कछू नाहि ॥

रागु बसंतु, भगत रविदास, गुरु ग्रंथ साहिब, ११९६

तुझहि सुझंता कछू नाहि ॥
पहिरावा देखे ऊभि जाहि ॥
गरबवती का नाही ठाउ ॥
तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ॥१॥
तू काँइ गरबहि बावली ॥
जैसे भादउ खूँबराजु तू तिस ते खरी उतावली ॥१॥ रहाउ ॥
जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु ॥
तनि सुगंध ढूढै प्रदेसु ॥
अप तन का जो करे बीचारु ॥
तिसु नही जमकंकरु करे खुआरु ॥२॥
पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु ॥
ठाकुरु लेखा मगनहारु ॥
फेड़े का दुखु सहै जीउ ॥
पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ॥३॥
साधू की जउ लेहि ओट ॥
तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि ॥
कहि रविदास जुो जपै नामु ॥
तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥४॥१॥

सार: अहं अक्सर हमारी पहचान को हमारे रिश्तों और संपत्तियों से जोड़ देता है जिससे हम उन्हें अपना अधिकार समझने लगते हैं और उन्हें केवल प्रतिष्ठा के प्रतीक तक सीमित कर देते हैं। यह सोच हमारे स्वामित्व की भावना को बढ़ाती है और नियंत्रण करने की हमारी इच्छा को बढ़ावा देती

है जो हमारी आंतरिक स्वतंत्रता को दबा सकती है। सशक्तिकरण तब आता है जब हम अपने गर्व को विनम्रता में रूपांतरित करते हैं, यह पहचानते हुए कि हमारे रिश्ते और वस्तुएँ जीवन की क्षणिक अभिव्यक्तियाँ हैं। हालाँकि, उन्हें महत्व देना ज़रूरी है किंतु उन्हें पकड़कर रखने की लालसा से स्वयं को बोझिल नहीं बनाना चाहिए। अपने झूठे अहं को छोड़ने से हमारे अनुभव बेहतर होते हैं और स्वयं से तथा दूसरों से हमारे संबंध अधिक गहन होते हैं।

तुझहि सुझंता कछू नाहि ॥
तुम कुछ भी समझ नहीं पा रहे हो। यह जागरूकता के अभाव को दर्शाता है और गहन आत्म-निरीक्षण की आवश्यकता की ओर संकेत करता है।

पहिरावा देखे ऊभि जाहि ॥
अपने पहनावे (आभूषण, वेश-भूषा) और प्रतिष्ठा को देखकर हम घमंड से फूल जाते हैं। यह अहंकार, भौतिक संपत्ति, बौद्धिक उपलब्धियों या दिखावे में निहित सतही घमंड को दर्शाता है।

गरबवती का नाही ठाउ ॥
अहंकार का कोई स्थायी आधार नहीं होता। यह बताता है कि जो लोग घमंडी होते हैं, उनमें विनम्रता की कमी होती है और वह अनिवार्य रूप से गिरते हैं।

तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ॥१॥
तुम्हारी गर्दन पर यह फंदा क्यों है? यह प्रश्न हमें यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि हम अपने वास्तविक स्वरूप को अहंकारी इच्छाओं से क्यों बांध लेते हैं। (१)

तू काँइ गरबहि बावली ॥
हे भटके हुए मन, तू ऐसे घमंड में क्यों पड़ा है? यह मानसिकता दिखाती है कि अनियंत्रित घमंड दूसरों पर नियंत्रण पाने की छलपूर्ण लालसा में बदल सकता है जो आध्यात्मिक पतन का कारण बनता है।

जैसे भादउ खूँबराजु तू तिस ते खरी उतावली ॥१॥ रहाउ ॥
जैसे वर्षा ऋतु में उगने वाला कुकुरमुत्ता (मशरूम) थोड़े समय में उगकर जल्द ही ग़ायब हो जाता है वैसे ही तुम्हारा अहंकार क्षणिक है। यह रूपक दिखाता है कि अहंकार के प्रभाव पलभर को महत्त्वपूर्ण लग सकते हैं, पर परिस्थितियाँ बदलते ही लुप्त हो जाते हैं। (१)(विराम)

जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु ॥
जैसे कस्तूरी मृग अपने रहस्य को नहीं जान पाता। यह आत्म-अज्ञानता की त्रासदी को दर्शाता है जहाँ मनुष्य अपनी ही संभावनाओं से अनजान रहता है।

तनि सुगंध ढूढै प्रदेसु ॥
अपने ही शरीर में सुगंध होते हुए भी वह उसे दूर-दूर खोजता फिरता है। यह अपने मूल से अलगाव के कारण बेचैनी का प्रतीक है, जो अंदर है उसको बाहर ढूंढना।

अप तन का जो करे बीचारु ॥
जो अपने सच्चे स्वरूप को जानने के लिए अपना ध्यान आंतरिकता की ओर मोड़ते हैं। यह आत्म-चिंतन के महत्त्व पर ज़ोर देता है।

तिसु नही जमकंकरु करे खुआरु ॥२॥
उनको मृत्यु का भय परेशान नहीं करता। यह संकेत देता है कि आत्म-निरीक्षण, अनिश्चितता की भावनाओं को दूर करने का एक प्रभावी साधन है। (२)

पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु ॥
मनुष्य अपने पारिवारिक वंश और रिश्तों पर गर्व करता है। संपत्ति से जुड़ने की यह प्रवृत्ति, शक्ति और स्नेह को आत्म-महत्त्व की मानसिकता में बदल सकती है।

ठाकुरु लेखा मगनहारु ॥
सर्वव्यापी चेतना हमारे कर्मों की जवाबदेही माँगती है। यह इस सिद्धांत को संदर्भित करता है कि हमारे चुनावों के परिणाम का प्रभाव होता है।

फेड़े का दुखु सहै जीउ ॥
अंतरात्मा अपने ही ग़लत निर्णय से होने वाले दुःख को भोगती है। यह प्रकाश डालता है कि दुख का असली स्रोत हमारे कर्मों में है, बाहरी प्रतिफल में नहीं।

पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ॥३॥
आत्म-चिंतन के बाद, आप किसे प्रिय और प्यारा कहकर संबोधित करेंगे? यह स्पष्ट करता है कि आत्मनिरीक्षण, योग्य और अयोग्य के बीच अंतर को उजागर करता है। (३)

साधू की जउ लेहि ओट ॥
जब एक सहारे के रूप में, सार्वभौमिक गुणों के साथ सामंजस्य का गुण लिया जाता है। यह ज्ञान को अपनाकर हमारे सच्चे स्वरूप की रक्षा करने का साधन प्रदान करता है।

तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि ॥
असंख्य ग़लत काम करने की मानसिकता मिट जाती है। यह हमें सीमित करने वाले नकारात्मक संस्कारों को भस्म करने के लिए ज्ञान की शक्ति पर प्रकाश डालता है।

कहि रविदास जु जपै नामु ॥
रविदास कहते हैं कि जो लोग निरंतर सच्चाई के सार पर विचार करते हैं। यह सजगता के अभ्यास को एक मूल्यवान गुण के रूप में दिखाता है।

तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥४॥१॥

ऐसा वजूद, जाति, वंश, या जन्म-मृत्यु के चक्रों की अवधारणाओं से नहीं जुड़ता है। इसका नतीजा एकता को सीमित करने वाली, सामाजिक, धार्मिक और जैविक परिभाषाओं से, पूर्ण मुक्ति की अवस्था है। (४)(१)

तत्त्व: भक्त रविदास बताते हैं कि अहंकार, प्रतिष्ठा और बाहरी दिखावा पल भर में पनपते हैं लेकिन उतनी ही तेज़ी से लुप्त भी हो जाते हैं, वर्षा ऋतू के कुकुरमुत्ते (मशरूम) की तरह जो एक मौसम तक ही रहता है। बाहरी तृप्ति की खोज उस कस्तूरी मृग के समान है जो किसी ऐसी सुगंध का पीछा करता है जिसे वह पा सकता है लेकिन कभी खोज नहीं पाता। यह दोनों रूपक सिखाते हैं कि जिसे हम अजेय समझते हैं वह क्षणिक है और जिसे हम खोज रहे हैं वह शायद हमारे अनुमान से कहीं अधिक निकट है। बाहरी मान्यता के पीछे भागने से केवल हमारी ऊर्जा ही नष्ट होती है, हमारी क्षमता एवं वास्तविक सामर्थ्य तो भीतर की ओर ध्यान केंद्रित करने और पहचान की आवश्यकता के बिना शांति प्राप्त करने में निहित है।

पहलकदमी

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com